# ब्रह्म विद्या के अभ्यास की आवश्यकता

**प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,**

**पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान**

ब्रह्म विद्या का अर्थ है– आत्मविद्या। आत्मविद्या शाश्वत् तत्त्व है। इसी एक विद्या को जान लेने से जीवन में किसी ज्ञान की आवश्यकता नहीं रहती। यह विद्या मोक्ष विद्या है। नचिकेता जैसे महान ज्ञानी को ही इसका ज्ञान हो पाता है। उपनिषदों में ब्रह्म विद्या का वर्णन है बिना उसको समझे जीव को स्वरूप ज्ञान नहीं हो पाता। विनाशी और अविनाशी को समझे बिना आत्मविज्ञान को नहीं समझा जा सकता। विनाशी का अर्थ है– विनाशशील और अविनाशी का अर्थ है– जो नष्ट न हो। इस संसार में दो तत्व हैं– जड़ और चेतन। जड़ को पुद्गल कहा जाता है। पुद्गल विनाशी पदार्थ है। यह गलन–मिलन धर्मा है। जितने भी पदार्थ संयोग से बनते हैं, उनका वियोग निश्चित है।

पुद्गल या जड़ पदार्थ अणुयों के संयोग से बनता है इसलिए वह विनाशी कहलाता है। आत्मा या चेतन तत्व अविनाशी पदार्थ है। यह किसी के संयोग से नहीं बल्कि इसकी अपेक्षा से अन्य पदार्थ चेतनवत् प्रतीत होते हैं। जितने भी निर्मित तत्व है वे सब विनाशी है। टूटना, जुड़ना उनका स्वभाव है। मिट्टी से घड़ा बना लिया जाता है। घड़ा टूटकर टुकड़ों में बंट जाता है। मिट्टी के विभिन्न पर्याय भिन्न–भिन्न रूप धारण करते रहते हैं। पुद्गल की विशेषता है कि उसमें उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य चलता रहता है। जड़ तत्व में संवेदना नहीं होती। जड़ पदार्थ सुख–दुःख की अनुभूति नहीं करता। यह साधन है साध्य नहीं।

आत्मा अजर–अमर अविनाशी तत्व है। यह हर सदैव एकसमान रहता है। इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। असंख्य चैतनमय परमाणुओं का पिण्ड आत्मा है। आत्मा चेतन तत्व है। इसे सुख–दुःख की अनुभूति होती है। शरीर जड़ है और आत्मा चेतन। शरीर में जो चेतना प्रतीत होती है वह आत्मा के कारण है। इस शरीर से यदि चेतन तत्व पृथक् हो जाये तो शरीर जड़वत् पड़ा रहेगा। चेतना स्व पर प्रकाशी है। जैसे दीपक प्रकाश देता है और अन्य वस्तुओं

को भी प्रकाशित करता है, वैसे ही आत्मा अपने को प्रकाशित करने के साथ ही साथ अन्य वस्तुओं को भी प्रकाशित करती है।

मन, वचन और काया की प्रवृत्ति आत्मा के द्वारा होती है। शरीर जड़ और आत्मा चेतन है। पत्थर को तोड़ने में हिंसा नहीं है किन्तु चींटी को मारने में हिंसा है। चींटी जीवित पदार्थ है। संसार में जितने भी जीवित पदार्थ है, उनमें आत्मा के स्तर पर कोई भेद नहीं है। सबमें एक समान आत्मा है। भेद कर्मजन्य है। कर्मावरण के कारण किसी में चेतना का अधिक विकास है और किसी में कम। विभिन्नता विनाशी तत्व के कारण है। आत्मा ही एक ऐसा शाश्वत तत्त्व है जिसके आधार पर मानव अपने अस्तित्त्व को सिद्ध करता है। आत्मा दो प्रकार की है– एक जीवात्मा दूसरी परमात्मा। परमात्मा या ईश्वर सर्वज्ञ है, और एक है। जीवात्मा प्रत्येक शरीर में भिन्न–भिन्न व्यापक और नित्य है। परमतत्त्व अंतिम तत्त्व है, सर्वाधार है, सभी वस्तुओं का मूलस्थान है। उसी को मूलतत्त्व कहा जा सकता है, जिससे इस जगत् की उत्पत्ति हुयी है, जो सभी वस्तुओं की सत्ता का आधार है और जिसमें अन्ततः इन सभी वस्तुओं का लय हो जाता है। जगत् विनाशी है और परमतत्व अविनाशी है।

जगत् का आदि और अन्त ईश्वर को माना गया है। अतः ईश्वर ही परमतत्त्व है। इसे ही आत्मतत्त्व भी कहते हैं। अविनाशी तत्व या आत्मा न मोटा है, न पतला है, न छोटा है, न बड़ा है, न लाल है, न द्रव है, न छाया है, न तम है, न वायु है, न आकाश है, न संग है, न रस है, न गन्ध है, न नेत्र है, न कान है, न वाणी है, न मन है, न तेज है, न प्राण है, न मुख है, न माप है, उसमें न अन्दर है, न बाहर है, अतः आत्मा अविनाशी तत्व है। जीवात्मा वास्तव में न स्त्री है, न पुरुष है और न नपुंसक ही है। यह जब जिस शरीर को ग्रहण करता है, उस समय उससे संयुक्त होकर वैसा ही बन जाता है। जो जीवात्मा आज स्त्री है, वही दूसरे जन्म में पुरुष हो सकता है, जो पुरुष है, वही स्त्री हो सकता है। भाव यह है कि स्त्री, पुरुष और नपुंसक आदि भेद शरीर को लेकर हैं, जीवात्मा को लेकर नहीं। जीवात्मा सर्वभेदशून्य और सारी उपाधियों से रहित है। आत्मा के कारण जड़ शरीर भी चेतन की तरफ प्रतीत होने लगता है।

आत्मा को अमर, नित्य तथा अपरिणामी कहा गया है। आत्मा न उत्पन्न होता है, न मरता है, यह न ही किसी अन्य कारण से ही उत्पन्न हुआ है और न स्वतः ही कुछ अर्थान्तररूप से बना है। यह अजन्मा नित्य–शाश्वत और पुरातन है तथा शरीर के नष्ट होने पर भी नहीं नष्ट होता। गीता में भी कहा गया है कि यह आत्मा किसी काल में न तो जन्मता है और न मरता है तथा यह न उत्पन्न होकर फिर होने वाला ही है, क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुरातन है।

गीता भी इसी बात को कहती है कि जो इस आत्मा को मारनेवाला समझता है तथा जो इसको मरा मानता है, वे दोनों ही नहीं जानते, क्योंकि यह आत्मा वास्तव में न तो किसी को मारता है और न किसी के द्वारा मारा जाता है। आत्मा की अनुभूति कैसे करें यह एक प्रश्न है? आत्मा की अनुभूति अनुभव जन्य है। श्रमण परम्परा में केवलज्ञान हो जाने के बाद जीव ईश्वर बन जाता है। आत्मा अपने मूल स्वरूप में स्थिर हो जाता है। यह अवस्था परम आनन्द की अवस्था है। क्योंकि इस अवस्था में आत्मा पर कर्मों का आवरण नहीं रहता है।